शुरुआती पाठकों के लिए बाल साहित्य कुछ सवाल

चन्दन यादव

स्कूल में आकर विद्यार्थी पढ़ना-लिखना सीखते हैं। यह प्रक्रिया ऐसी होनी चाहिए कि उन्हें पढ़ने का चस्का लग सके और वे एक सक्षम पाठक बन सकें। यह ज़रूरी है कि विद्यार्थी जब स्कूल से निकलें तब सक्षम और स्वतंत्र पाठक बनकर निकलें। सीखने में आत्मनिर्भरता हासिल करने और सीखने की जीवनपर्यन्त प्रकिया में शामिल होने की यह एक महत्त्वपूर्ण पूर्व शर्त है। लेकिन क्या स्कूल बच्चों को सक्षम पाठक बना पा रहे हैं? पढ़ना-लिखना सिखाने की प्रक्रिया में कुछ तो ऐसा है कि बच्चे अक्षर ज्ञान और मात्रा ज्ञान के बाद किसी तरह जोड़-जोड़ कर पढ़ना सीख भी लेते हैं तब भी किताबों से उन की दोस्ती नहीं हो पाती है। चन्दन यादव प्राथमिक कक्षाओं में प्रयुक्त होने वाली पठन-सामग्रियों के विश्लेषण के जरिए इन्हीं सवालों की पड़ताल कर रहे हैं। सं.

बाल साहित्य की बच्चों तक पहुँच से जुड़े दो प्रमुख मामले हैं। पहला "इस की बच्चों तक पहुँच पढ़ना सीखने के बाद होनी चाहिए या इस के दौरान?" और दूसरा "बाल साहित्य किसे कहें?" हम एक-एक करके दोनों पहलुओं पर बात करेंगे। पहला मामला "पढ़ने की समझ" से जुड़ा हुआ है और दूसरा "बच्चों और साहित्य की समझ" से।

हम अपनी बात पहले मसले से शुरू करेंगे।

बच्चों की शिक्षा से जुड़े व्यक्ति, शिक्षक और अभिभावक यह मानते हैं कि बच्चों को पढ़ना सीखने के बाद किताबें दी जानी चाहिए। एक राज्य के दसियों स्कूलों के अवलोकन में मैंने पाया कि वहाँ बच्चों के लिए पुस्तकालय की किताबें उपलब्ध हैं। पर पहली और दूसरी कक्षा के बच्चों को किताबें नहीं दी जाती हैं।

इस के पीछे पढ़ने की पारम्परिक समझ है। माना जाता है कि जब बच्चे सभी वर्णों और मात्राओं को पहचानना, बोलना और जोड़कर उच्चारण करना सीख जाएँ तो हम कह सकते हैं कि वे पढ़ना सीख गए हैं। इस समझ से संचालित लोग पहले वर्ण सिखाते हैं, फिर मात्राएँ, इस के बाद शब्द। वाक्य पठन का नम्बर अन्त में आता है। इस तरीके में यह स्वाभाविक है कि बच्चों को पढ़ना सीखने के बाद ही किताबें दी जाएँ।

पढ़ने की नई समझ के अनुसार यह माना जाता है कि चित्रों को देखकर समझना, किताब के पन्ने पलटते हुए चित्र के आधार पर मन से कहानी बनाना (लोगोग्राफिक पठन) और कहानी-कविता सुनना भी शुरुआती पठन है। पढ़ने की इस समझ के अनुसार पढ़ने का मतलब छपी हुई सामग्री से अर्थ ग्रहण करना है। इस में कई अन्य कौशल शामिल हैं, जिस में पूर्व ज्ञान का उपयोग करना, सन्दर्भ और विषय को समझना, अनुमान लगाना, सम्बन्ध बैठाना आदि मुख्य हैं।

पढ़ने की पारम्परिक समझ छोटे बच्चों को किताबों से वंचित तो करती ही है इस से पढ़ना सिखाने के लिए उपयोग की जा रही विषयवस्तु भी नकारात्मक रूप से प्रभावित होती है। कोई भी रचना भले ही वह कितनी भी अच्छी हो,

अगर कुछ खास वर्ण सिखाने के लिए उपयुक्त न हो तो उसे पाठ्यपुस्तक का हिस्सा नहीं बनाया जा सकता। इसे हम पाठ्यपुस्तकों से लिए कुछ उदाहरणों में देख सकते हैं।

पाठ्यपुस्तकों की रचनाएँ

हमारे देश के बहुत से बच्चों को पढ़ने के लिए जो एकमात्र किताब मयस्सर है, वह भाषा की पाठ्यपुस्तक है। मैंने उत्तर प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़ जैसे हिन्दी भाषी राज्यों की हिन्दी की किताबें देखी हैं। इस के आधार पर मैं इतना कह सकता हूँ कि कई बाल पत्रिकाओं और अखबारों में बच्चों के लिए निर्धारित ज़गह पर दिखाई देने वाली रचनाओं की तुलना में पाठ्यपुस्तकों का रचना चयन बेहतर है। एनसीइआरटी की ***रिमझिम*** की प्रशंसा तो नाम लेकर भी की जा सकती है।

पाठ्यपुस्तकों में चयनित रचनाओं की दिक्कतें दूसरी तरह की हैं, जो पढ़ने की पारम्परिक समझ से जुड़ी हुई हैं। इस के अनुसार बच्चों को पहले वर्ण सिखाना पड़ता है। हालाँकि अब इस के लिए क ख ग घ वाला क्रम चलन में नहीं है। फिर भी इस के पहले कि बच्चों को स्वतन्त्र ढंग से पढ़ने के लिए किताबें दी जाएँ, सिखाने तो सारे वर्ण हैं। इस के चलते किताब बनाने वाली टीम का कोई भी बन्दा कैसी भी बेसिरपैर की तुकबन्दी जड़ देता है। शर्त बस इतनी है कि उस में सिखाए जा रहे 4-5 वर्ण आते हों।

जैसे– ऋ और त्र सिखाने के लिए–
वर्षा की ऋतु आई है
त्रण पर हरियाली छाई है
–हरियाणा की झिलमिल

ग और र सिखाने के लिए–
गमला फूलों वाला लाओ
अपना घर आँगन महकाओ
नल से पानी लेकर आओ
पौधों की तुम प्यास बुझाओ
मछली देखो आओ-आओ
रस्सी कूदो नाचो-गाओ।
–समेकित छत्तीसगढ़

इस स्थिति को एक बच्चे की निगाह से देखिए। कक्षा पहली में आए एक बच्चे के लिए यह एक ऐसा समय है, जबकि उस का लिखित सामग्री से परिचय हो रहा है। इस वक्त उसे महसूस होना चाहिए कि पढ़ना एक मज़ेदार काम है, ताकि उसे इस को सीखने की प्रेरणा मिले। और होता इस के ठीक विपरीत है।

बच्चो तुम भी अब उठ जाओ,
माता पिता को शीश नवाओ।

हज़ार तरीके से यही बात तो स्कूल के बाहर भी कही जा रही है। फिर उसे पढ़ना क्यों सीखना चाहिए!

पढ़ना सीखने की पारम्परिक समझ के यही नतीजे हो सकते हैं। इस जुगत में "बाल साहित्य" की जगह सिकुड़ती जाती है। इस के साथ कुछ और भी सिकुड़ता है, पढ़ने का आनन्द, पढ़ने की रुचि, नए अनुभवों से साक्षात्कार, भाषा की छटा, सोचने और अनुभव से जोड़ने की गुंजाइश वगैरह। इस में बच्चे की मुख्य भूमिका ऐसे विद्यार्थी की है, जिसे पढ़ना सीखना है। वो पाठक भी हो सकता है, ये बहुत दूर की बात है।

बाल साहित्य से जुड़ा दूसरा मसला यह है कि हम "बाल साहित्य" किसे कहें?

इसे और विस्तार से कहना हो तो हम कहेंगे कि क्या वह बच्चों के सरोकार और सवालों से दो चार होता है? क्या वह बच्चों के अनुभवों में कुछ नया जोड़ता है? क्या वह उन्हें फ़रक तरीके से कुछ सोचने के लिए प्रेरित करता है? क्या वह उन में ये अहसास जगा पता है कि पढ़ना एक आनन्ददायक काम है?

अच्छा होगा कि हम एक कहानी, जो मुझे किताब रूप में मिली, से बात शुरू करें–

एक तोता था। उस का नाम मिट्ठू था। वह अपनी पत्नी के साथ एक पेड़ पर रहता था। उस के पेड़ के पास ही एक रानी का महल था। महल के बगीचे में ढेर सारे अमरूद लगे थे। जब भी मिट्ठू को भूख लगती, वह महल के बगीचे से अमरूद तोड़ने चला जाता था। मिट्ठू अमरूद

खाता कम, फेंकता व खराब ज़्यादा करता था। यह देखकर रानी बहुत दुखी थी। उस ने सोचा तोते को अमरूद खराब करने से कैसे रोका जाए। एक दिन जब मिट्ठू अमरूद तोड़ने गया तो रानी ने उस को पकड़ लिया। मिट्ठू ने काफी चिरौरी की कि रानी उसे छोड़ दे। रानी ने मिट्ठू से कहा, "मैं तुम्हें नहीं छोड़ूँगी, अपने पास ही रखूँगी और अच्छे-अच्छे अमरूद खाने को दूँगी।" मिट्ठू बहुत खुश हो गया लेकिन थोड़ी ही देर में उसे अपनी पत्नी की याद आने लगी। उस ने रानी से कहा, "मेरी पत्नी मेरा इन्तज़ार कर रही है, वह भूखी होगी।" रानी को दया आ गई। उस ने बहुत सारे अमरूद और फल तोड़कर मिट्ठू को दिए और बोली– यह अपनी पत्नी को दे देना और दोनों मिलकर खा लेना। मिट्ठू ने घर जाकर सारा किस्सा अपनी पत्नी को बताया। पत्नी ने भी मिट्ठू को समझाया कि आज से कभी भी फल खराब नहीं करना।

आप अगर बच्चों के लिए लिखे गए अच्छे साहित्य से दो चार हुए हैं तो आपने "बीमारी" पकड़ ली होगी।

यह कहानी तोतों का उबाऊ मानवीकरण है। हालाँकि इंसान जब रचेंगे तो कुछ न कुछ मानवीकरण तो होगा। इस में तोता कमाऊ पति है, तोती पति पर आश्रित गृहिणी है। दोनों एक ऐसे समाज में रहते हैं, जैसे में हम भी रहते हैं। तोता बच्चों की तरह खाना फैलाता है। खाना फैलाना बुरी बात है, इस को वे तय करते हैं जो ताकत में तोते से बड़े हैं। 'रानी' जैसे हम बड़े तय करते हैं कि बच्चों के लिए क्या अच्छा क्या बुरा है। कहानी तोते की इस स्वीकारोक्ति के साथ खत्म होती है कि खाते हुए खाना फैलाना अच्छी बात नहीं है।

कहानी की रानी, बच्चों के अभिभावक, या स्कूल के शिक्षक कोई भी हो सकता है! और बुरी बात की एक लम्बी सूची बनाई जा सकती है–

प्रतिदिन स्नान न करना बुरी बात है।

रोज मंजन न करना बुरी बात है।

कक्षा में आपस में बात करना बुरी बात है।

रोज स्कूल न जाना बुरी बात है।

सुबह उठते ही माता-पिता को प्रणाम न करना बुरी बात है।

बुरे बच्चों '?' की संगत करना बुरी बात है।

हम ने ऊपर जो 'राग बुरी बात' सुनाया वो तो बच्चे के कानों में अनवरत गूँजता ही रहता है। जहाँ उन को लिखित सामग्री से परिचित कराना है, उन में पढ़ने के प्रति ललक जगानी है, उन को नए अनुभव और भाषा की छटा का एक्सपोजर देना है, क्या वहाँ भी यही "राग" बजाते रहना चाहिए?

फ़र्ज़ करो कि इस में रानी की जगह किसान होता! तोते की ज़गह खरगोश, बन्दर या भालू होता! होता तो होता! तब भी ये कहानी राग बुरी बात के आग्रह से टस से मस न होती। खेद की बात है कि ख़ासकर शुरुआती पाठकों के लिए रचा जाने वाला बाल साहित्य इसी तरह की रचनाओं से भरा हुआ है।

एक प्रकार है, शहरी बच्चों को हीरो बनाने का। मैं कुछ काल्पनिक शीर्षक दे रहा हूँ, इस उम्मीद से कि आप ने इस से मिलते-जुलते शीर्षक देखे होंगे। "पिंकू की समझदारी", "दोस्त की मदद", "राजू ने चोर को सिखाया सबक" आदि। आप आधी कहानी और उस का पूरा सार तो इन के शीर्षक से ही बूझ सकते हैं।

एक दूसरा प्रकार है, शिक्षा देना। हालाँकि शिक्षा तो सब जगह है, जैसे "लालच का फल", "धीरज का फल", "ईर्ष्या बुरी बला", "चूहे को मिला सबक"।

एक तीसरा प्रकार है, मानवीय दुर्गुणों का जानवरों पर आरोपण। "चालाक लोमड़ी", "बड़बोला कौआ", "मूर्ख बन्दर", "दयालु हाथी" आदि।

आप ऐसे और प्रकार भी ढूँढ़ सकते हैं। मुझे इन के कुछ खास लक्षण भर गिनाने हैं।

एक– सारी कहानियाँ बच्चों को कोई न कोई शिक्षा देना चाहती हैं।

दो– अधिकांश कहानियों के पात्र बदल जाएँ,

जैसे कौए की जगह बगुला आ जाए, तब भी कहानी वही रहेगी।

तीन– सारी कहानियाँ अर्थ के स्तर पर इकहरी होंगी। पाठक के लिए अर्थ गढ़ने की जगह बहुत कम होगी।

चार– उन में बिरले ही कहन का कोई नया अन्दाज़ या दुनिया को देखने की कोई नई खिड़की मिलेगी।

मैं जब भी इस तरह की रचनाएँ देखता हूँ तब मुझे सब से अधिक अफसोस इस बात का होता है कि "हम बच्चों को, उन के सरोकारों, उन की कल्पनाओं और उन की सोचने-समझने की क्षमता को कितना कम जानते हैं।"

इस स्याह परिदृश्य में उम्मीद के कुछ जुगनू भी हैं। इस कड़ी में हम कई नाम ले सकते हैं। पीपुल्स पब्लिशिंग हॉउस, नेशनल बुक ट्रस्ट, चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट, टाटा का पराग ट्रस्ट, एकलव्य, कथा, तूलिका आदि। रूम टू रीड और प्रथम हैं जिन के लिए किताबें प्रकाशित करने का मुख्य उद्देश्य पढ़ना सिखाना है, पर वे पाठ्यपुस्तकों से झलकती पढ़ने की संकुचित समझ से संचालित नहीं हैं। इसी कड़ी में एकलव्य की पत्रिका *चकमक* और इकतारा बालसाहित्य केन्द्र की पत्रिका *प्लूटो* का नाम भी लिया जा सकता है।

तो हमने राजतंत्र से लोकतंत्र में चली आई एक रानी और तोते की कहानी से बातचीत शुरू की थी। तोता जो कौआ, बगुला या कुत्ता होता तब भी कहानी वही रहती।

अच्छा होगा कि अब हम बिना किसी सैद्धान्तिक विमर्श के बच्चों के लिए लिखी कुछ रचनाओं को पढ़कर इस बात को महसूस करें कि छोटे बच्चों के लिए किस तरह का साहित्य होना चाहिए।

एक

शेर दहाड़ा जंगल में
तो तोते उड़ गए।
आँख घुमाकर तोते बोले,
किस के उड़ गए?

- प्रभात

दो

माँ ने कहा पानी बरबाद मत करो,
मैंने नल बन्द कर दिया।
माँ ने कहा समय बरबाद मत करो,
मैंने घड़ी बन्द कर दी।

- वृषाली जोशी

तीन

मछली जल की रानी है,
अब यह बात पुरानी है।

- सुशील शुक्ल

चार

कितनी भोली कितनी प्यारी
सब पशुओं में न्यारी गाय,
सारा दूध हमें दे देती,
आओ इसे पिला दें चाय।

- शेरजंग गर्ग

पाँच

देर से पहुँची मैं स्कूल
एकदम चिल एकदम कूल
सर ने मेरा बैग उतारा
और दिया चम्पा का फूल।

छह

धान लगाई है
अब की खेतों में हम ने
अपनी जान लगाई है।

- सुशील शुक्ल

ये सभी रचनाएँ कविताएँ हैं। कहानियों का ज़िक्र फिर कभी। इन को पढ़कर सोचिए कि क्या ये समझने की कोई नई खिड़की खोलती हैं? क्या ये चीज़ों को अलग अन्दाज़ से देखती हैं? क्या ये भाषा और कहन का कोई अछूता पन्ना खोलती हैं? क्या ये संवेदनाओं को विस्तार देती हैं? और इस सब के साथ एक और ज़रूरी बात कि पढ़ने का आनन्द देती हैं?

चन्दन यादव तीन दशकों से बतौर शिक्षा कार्यकर्ता सक्रिय हैं। वर्तमान में लैंग्वेज लर्निंग फाउंडेशन से जुड़कर कार्य कर रहे हैं।
सम्पर्क : chandansamwad@gmail.com